अपनी ही अदालत में मुकदमा हारते रहे अटल जी !

भारतीय राजनीति क्या विश्व राजनीति में भी अगर कोई एक नाम बिना किसी विवाद के कभी लिया जाएगा तो वह नाम होगा अटल बिहारी वाजपेयी का। यह एक ऐसा नाम है जिस के पीछे काम तो कई जुड़े हुए हैं पर विवाद शून्य हैं। राजनीति काजल की कोठरी है, इस में से बिना कोई कालिख का निशान लिए निकलना टेढ़ी खीर है। लेकिन अटल जी निकले हैं। सार्वजनिक जीवन में अगर किसी को शुचिता और मर्यादा का पाठ पढ़ना हो तो वह अटल बिहारी वाजपेयी से सीखे। राजनीति में अगर राजधर्म का पाठ किसी को सीखना हो तो अटल जी से सीखे। भारतीय राजनीति और समाज में जो स्वीकार्यता अटल जी को मिली है, वह दुर्लभ है। उन की यह स्वीकार्यता भारतीय समाज और राजनीति की हदें लांघती हुई विश्व के पटल पर भी उभरती है। यहां तक की पड़ोसी देश पाकिस्तान में भी जहां के राजनीतिज्ञ सुबह-शाम पानी पी-पी कर भारत और भारतीय राजनीति को कोसते फिरते हैं, वहां भी अटल जी की स्वीकार्यता निर्विवाद है। कोई एक अंगुली तक नहीं उठाता। तब जब कि कारगिल को ले कर पाकिस्तान के दांत खट्टे अगर किसी ने किए तो वह अटल जी ही थे। पर कारगिल के खलनायक परवेज़ मुशर्रफ़ तक वाजपेयी का झुक कर न सिर्फ़ इस्तकबाल करते हैं, बल्कि उन की बाडी लैंग्वेज़ भी बदल जाती है। वह लगभग नत-मस्तक हो जाते हैं। तो शायद इस लिए भी कि वाजपेयी जी जितना विनम्र और दूरदर्शी राजनीतिज्ञ मुशर्रफ़ या किसी और भी की ज़िंदगी में कम आते हैं। लेकिन अटल बिहारी वाजपेयी ऐसे ही इकलौते विनम्र राजनीतिज्ञ इस लिए हैं क्यों कि उन के जीवन का मूल-मंत्र ही यह है :

मेरे प्रभु !
मुझे इतनी ऊंचाई कभी मत देना
गैरों को गले न लगा सकूं
इतनी रुखाई
कभी मत देना।

और ऐसा भी नहीं है कि यह बात वह सिर्फ़ अपनी कविता में ही कहते हैं। उन को ऐसा जीवन में भी करते मैं ने ही नहीं, सब ने बारंबार देखा है। कि समय, समाज और सत्ता ने जो ऊंचाई उन्हें बार-बार दी, बावजूद उस के वह सब को गले भी बार-बार लगाते रहे और रुखाई तो जैसे उन की डिक्शनरी में कभी किसी ने देखी ही नहीं। भाजपा, जनसंघ या आर.एस.एस. से जिस के मतभेद रहे हैं या हैं उन से भी

अटल जी के मतभेद नहीं रहे। विरोधी भी जब-जब अटल जी के विरोध की बात आई तो सिर्फ़ यह कह कर कतरा गए कि एक सही आदमी, गलत पार्टी में है। चंद्रशेखर और नरसिंहा राव जैसे लोग तमाम-तमाम मतभेदों के बावजूद जब अटल जी की बात आती तो उन्हें गुरुदेव कह कर नत हो जाते थे। बहुत कम लोग हुए हैं भारतीय राजनीति में जिन्हें जनसभा हो या लोकसभा हर कहीं पिनड्राप साइलेंस यानी नि :शब्द हो कर सुना जाए, अटल बिहारी वाजपेयी उन गिनती के लोगों में शुमार होते हैं।

न सिर्फ़ भाषणों में बल्कि व्यक्तिगत बातचीत में भी उन्हें सुनना एक अनुभव से गुज़रना होता था एक समय। अब तो वह बीमारी और बुजुर्गी के चलते लगभग निर्वासन भुगत रहे हैं पर जब एक बार बतौर प्रधानमंत्री लखनऊ आए तो मैं ने पूछा, 'अब क्या फ़र्क पाते हैं ?'

'फ़र्क ?' कह कर उन्हों ने आदत के मुताबिक एक लंबा पाज़ लिया। फिर जैसे उन के चेहरे पर एक तल्खी आई और बोले, 'लोगों से कट गया हूं। पहले लोगों के साथ चलता था, अब अकेले चलता हूं।' कह कर वह एक फीकी मुस्कान फेंक कर रह गए। अब जब वह स्वास्थ्य कारणों से ज़्यादा किसी से मिलते-जुलते नहीं, दिनचर्या भी उन की लगभग डाक्टरों और परिवारीजनों के बीच की बात हो चली है। अब वह ज़्यादा बोल नहीं पाते, सुन नहीं पाते, पहचान नहीं पाते आदि-इत्यादि खबरें जब-तब मिलती रहती हैं तो जान-सुन कर तकलीफ़ होती है। लेकिन उन का सार्वजनिक जीवन जितना चमकीला और निरापद रहा है उस से बड़े-बड़ों को रश्क हो सकता है। लेकिन राजनीति भी उन का प्रथम प्यार नहीं रही। एक समय वह खुद कहते रहे हैं कि राजनीति ने उन के कवि को भ्रष्ट कर दिया। राजनीति और पत्रकारिता दोनों ही ने उन के कवि को नष्ट किया ऐसा वह बार-बार मानते रहे हैं। राजनीति की रपटीली राह शीर्षक लेख में उन्हों ने खुद लिखा है, ' मेरी सबसे बड़ी भूल है राजनीति में आना। इच्छा थी कि कुछ पठन-पाठन करुंगा। अध्ययन और अध्यवसाय की पारिवारिक परंपरा को आगे बढ़ाऊंगा। अतीत से कुछ लूंगा और भविष्य को कुछ दे जाऊंगा, किंतु राजनीति की रपटीली राह में कमाना तो दूर रहा, गांठ की पूंजी भी गंवा बैठा। मन की शांति मर गई। संतोष समाप्त हो गया। एक विचित्र-सा खोखलापन जीवन में भर गया। ममता और करुणा के मानवीय मूल्य मुंह चुराने लगे हैं। क्षणिक स्थाई बनता जा रहा है। जड़ता को स्थायित्व मान कर चलने की प्रवृत्ति पनप रही है।' लगता है जैसे अटल जी यह लेख आज की परिस्थिति में लिख रहे हैं। लेकिन यह तो वह १९६३ में लिखा उन का लेख है। वह लिखते हैं, 'आज की राजनीति विवेक नहीं, वाक्चातुर्य चाहती है ; संयम नहीं, असहिष्णुता को प्रोत्साहन देती है ; श्रेय नहीं, प्रेय के पीछे पागल है।' सोचिए कि १९६३ में ही यह सब अटल जी देख रहे थे। आसान नहीं था यह देखना। वह लिख रहे थे, 'मतभेद का समादर करना तो दूर रहा, उसे सहन करने की प्रवृत्ति भी विलुप्त होती जा रही है। आदर्शवाद का स्थान अवसरवाद ले रहा है।'

अटल जी इन सारी चुनौतियों को देखते हुए ही आगे बढ रहे थे। वह लिख रहे थे, ' पद और प्रतिष्ठा को कायम रखने के लिए जोड़-तोड़, सांठ-गांठ और ठकुरसुहाती आवश्यक है। निर्भीकता और स्पष्टवादिता खतरे से खाली नहीं है। आत्मा को कुचल कर ही आगे बढ़ा जा सकता है।'

तो क्या अटल जी अपनी आत्मा को कुचलते हुए ही प्रधानमंत्री की कुर्सी तक पहुंचे ?

इस प्रश्न की पड़ताल होना अभी बाकी है। देर-सबेर समय इस का भी हिसाब लिखेगा ही। पर अभी

और तुरंत अभी तो अगर मुझ जैसों से पूछा जाए तो अटल जी जैसा राजनीति में पारंगत और निरापद भारतीय राजनीति में कोई दूसरा नहीं दिखता। जो काजल की कोठरी से निकल कर भी अपनी धवलता बरकरार रखे है।

अब वह सार्वजनिक मंचों पर भले नहीं दिखते पर उन की चर्चा के बिना सार्वजनिक मंच कम से कम भाजपा के तो नहीं ही होते। बाकी मंचों पर भी वह अनायास चर्चा में बने रहते हैं। और याद आ जाता है उन का ओज और कविता की लय में गुंथा भाषण। जिस में आंख बंद कर के वह कहीं शून्य में खो जाते थे, एक लंबा पाज़ लेने के बाद वह बोलते थे। भारतीय राजनीति के भीष्म पितामह बन चुके अटल जी जैसे शर-शैय्या पर लेट कर सूर्य के उत्तरायण होने का इंतज़ार कर रहे हैं। पर जैसे महाभारत में भीष्म पितामह से आशीर्वाद लेने के लिए कतार लगी रहती थी, अटल जी के साथ वैसा नहीं है। भाजपा में चुनाव के समय तो वह अभी भी प्रासंगिक हैं, बिना उन के नाम के किसी की नैया पार नहीं होती। पर बिना चुनाव के कोई उन की सुधि भी नहीं लेता। न ही उन की तरह की राजनीति में कोई दिलचस्पी लेता है अब।

एक बार की बात है। अटल जी लखनऊ आए थे। उन से मिलने वालों की कतार लगी थी। मैं भी उन से इंटरव्यू करने के लिए पहुंचा हुआ था। इंतज़ार में मुरली मनोहर जोशी जैसे नेता भी थे। बलिया के एक विधायक भरत सिंह भी थे। मंत्री पद की आस में। और भी कुछ लोग थे। भरत सिंह को जब मालूम हुआ कि मैं पत्रकार हूं और अटल जी से इंटरव्यू की प्रतीक्षा में हूं तो वह लपक कर मिले। वह चाहते थे कि अटल जी के सामने उन की अच्छी छवि प्रस्तुत हो जाए। उन्हों ने अपना परिचय दिया, 'माई सेल्फ़ भरत सिंह।' मैं ने छूटते ही पूछा कि बलिया वाले न ?' वह बोले,' हां।' मैं ने बताया उन्हें कि जानता हूं आप को आप की अंगरेजी की वज़ह से। जब आप बी.एच. यू. में बतौर छात्र संघ अध्यक्ष बोलते थे। आई टाक तो आइऐ टाक, यू टाक तो यूऐ टाक, डोंट टाक इन सेंटर-सेंटर !' सुन कर भरत सिंह सकपकाए। पर मुरली मनोहर जोशी ठठा कर हंसे। इसी बीच उन्हें अटल जी ने बुलवा लिया। वह हंसते हुए अंदर पहुंचे तो अटल जी ने उन से हंसने का सबब पूछा। उन्हों ने मेरा और भरत सिंह का वाकया बताया। और कहा कि पत्रकार को ही बुला कर पूछ लीजिए। अटल जी ने मुझे भी बुलवा लिया। और पूछा कि किस्सा क्या है ? तो मैं ने कहा कि भरत सिंह से सीधे सुनिए। सेकेंड हैंड संवाद सुनने से क्या फ़ायदा ? भरत सिंह भी बुला लिए गए। पर भरत सिंह नो सर, नो सर, सारी सर, सारी सर, करते रहे, बोले कुछ नहीं। खैर भरत सिंह मुझे आग्नेय नेत्रों से देखते हुए विदा हुए। कि तभी लाल जी टंडन आ गए। एक डिग्री कालेज के उदघाटन का न्यौता ले कर। कि अटल जी उस का उदघाटन कर दें। अटल जी ने वह न्यौता एक तरफ रखते हुए टंडन जी से कहा कि यह उदघाटन तो आप खुद देख लीजिएगा। और अपनी ज़ेब से एक पर्ची निकाल कर उन्हें निशातगंज की गली और मकान नंबर सहित खड़ंजा और नाली के ब्यौरे देने लगे। हैंडपंप के बारे में बताने लगे। और कहा कि मार्च का महीना है और हैंडपंप से पानी नदारद है। मई-जून में क्या होगा ? पानी नदारद है और नाली चोक है, सड़कें खराब हैं, बरसात में क्या हाल होगा ? यह और ऐसे तमाम ब्यौरे देते हुए अटल जी ने कहा कि, टंडन जी वोट मिलता है, नाली, खडंजा, सड़क ठीक होने से और हैंडपंप में पानी रहने से, डिग्री कालेज के उदघाटन से नहीं।' और सारी लिस्ट देते हुए भरपूर आंखों से तरेरते हुए कहा कि टंडन जी आगे से यह शिकायत नहीं मिले।' जी, जी कह कर टंडन जी उलटे पांव लौट गए। बैठे भी नहीं।

उस दिन मुझे समझ में आया था कि अटल जी लखनऊ में सब की ज़मानत ज़ब्त कराते हुए हर बार रिकार्ड वोटों से कैसे जीत जाते हैं। मुसलमानों तक के रिकार्ड वोट उन्हें मिलते रहे हैं। और तो और बाद के दिनों में तो बीते चुनाव में जब टंडन जी खुद लखनऊ लोकसभा से चुनाव में उतरे तो अटल जी की चिट्ठी ले कर ही चुनाव प्रचार करते दिखे। तब भी जितने मार्जिन से अटल जी जीतते थे, टंडन जी जीत कर भी उन के मार्जिन भर का वोट भी नहीं पा पाए। ऐसे ही एक बार राम जेठमलानी भी अटल जी के खिलाफ़ लखनऊ से चुनाव में उतरे। बोफ़ोर्स के समय में वह रोज जैसे राजीव गांधी से पांच सवाल रोज़ पूछते थे, अटल जी से भी पूछने लगे थे, कांग्रेस के टिकट पर चुनाव में थे ही। तब जब कि वह अटल जी के मंत्रिमंडल में कानून मंत्री रह चुके थे और एक विवाद के चलते उन्हें इस्तीफ़ा देना पडा़ था। उसी की कसर वह चुनाव में रोज़ सवाल पूछ कर निकाल रहे थे। उन के तमाम सवालों के जवाब में अटल जी ने एक दिन अपना हाथ घुमाते हुए बस एक ही बात कही थी कि, 'हमारे मित्र जेठमलानी को चुप रहने की कला नहीं आती।' बस अटल जी का इतना कहना भर था कि जेठमलानी चुप हो गए थे। और लखनऊ से अंतत : ज़मानत गंवा कर लौट गए। ऐसे जाने कितने किस्से अटल जी के हैं। अब अलग बात है कि उन्हीं कांग्रेस पलट जेठमलानी, जो विवादित बयान देने और हत्यारों को ज़मानत दिलाने के लिए ज़्यादा जाने जाते हैं, को भाजपा ने फिर से राज्यसभा में बैठा दिया। पर वाजपेयी ने कभी उफ़्फ़ भी नहीं किया।

दुश्मन तो दुश्मन अटल जी का तो इतिहास ऐसे तमाम किस्सों से भरा पड़ा है कि जो दोस्त भी, हमसफ़र भी उन के पीछे पड़े तो बरबाद हो गए। जाने अटल जी की कुंडली ऐसी है कि उन की अदा ऐसी है कि लोगों का दुर्भाग्य, समझना काफी कठिन है। लेकिन इतिहास गवाह है बलराज मधोक से लगायत गोविंदाचार्य, कल्याण सिंह, उमा भारती, मदनलाल खुराना और यहां तक कि लालकृष्ण आडवाणी तक तमाम-तमाम नामों को गिन लीजिए। अटल विरोधी राजनीति करने वाले लोग न घर के रहे न घाट के। और अटल जी ने कभी किसी का प्रतिवाद भी नहीं किया।

असल में अटल जी वह शीशा हैं जिसे आप अगर पत्थर से भी तोड़ने चलें तो पत्थर टूट जाएगा, वह शीशा नहीं। ऐसा मेरा मानना है। याद कीजिए गोवा का सम्मेलन। जिस में पार्टी की राय को दरकिनार कर अटल जी ने नरेंद्र मोदी को राजधर्म की याद दिला कर इस्तीफ़ा देने की सलाह दी थी। लेकिन आडवाणी खेमे ने अटल जी की इस सलाह पर पानी फेर कर अटल जी को शह देने की बिसात बिछा दी थी। उन्हें टायर्ड-रिटायर्ड के खाने में बिठाने की जुगत लगाई। अटल जी भांप गए पूरे खेल को और बोले, ' न टायर्ड, न रिटायर्ड ! आडवाणी जी के नेतृत्व में विजय की ओर प्रस्थान !' अटल जी के इस एक जुमले से समूची भाजपा दहल गई और फिर उन के चरणों में मय आडवाणी के समर्पित हो नतमस्तक हो गई थी।

अंतरराष्ट्रीय राजनीति में भी अटल जी इसी अदा के कायल रहे हैं। याद कीजिए संयुक्त राष्ट्र संघ में बतौर विदेश मंत्री उन का हिंदी में भाषण। याद कीजिए जिनेवा। तब नरसिंहाराव प्रधानमंत्री थे। पर प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व करते हुए अटल बिहारी वाजपेयी ने पाकिस्तान के छक्के छुड़ा दिए थे। तब यही सलमान खुर्शीद विदेश राज्यमंत्री थे।

बाद के दिनों में जब अटल जी प्रधानमंत्री बने तो जिस पाकिस्तान ने देश में निरंतर आतंकवाद की खेती में खाद-पानी देने में कभी संकोच नहीं किया, उसी पाकिस्तान से दोस्ती का हाथ बहुत गरमजोशी से

बढ़ाया। यह कहते हुए कि हम सब कुछ बदल सकते हैं, पर पड़ोसी नहीं बदल सकते। पर पहले परमाणु बम बनाया। क्यों कि पाकिस्तान की फ़ितरत वह जानते थे। और यह भी कि जानते थे कि भय बिनु होई न प्रीति। अमरीकी प्रतिबंधों की भी परवाह नहीं की इस के लिए। फिर बस से लाहौर गए। नवाज़ शरीफ़ से गले मिले। पर लौटे तो पीठ में कारगिल का घाव मिला। फिर भी उन्हों ने दोस्ती की आस नहीं छोड़ी। कारगिल के खलनायक मुशर्रफ़ को आगरा बुलाया। बातचीत टूट गई। अंतत : उन्हों ने कूटनीतिक दांव-पेंच से अमरीका को पाकिस्तान के साथ अटैचमेंट तोड़ने पर राज़ी किया। देश में लालकिला सहित संसद तक पर आतंकवादी हमले पाकिस्तान समर्थित आतंकवादियों ने किए। अटल जी ने भरपूर ताकत से पाकिस्तान पर वार किए। ज़्यादातर कूटनीतिक। वह लालकिले से भाषण भी देते रहे कि आतंकवाद और संवाद साथ-साथ नहीं चल सकता। सीमाओं पर सेना तैनात कर दी। समूचा देश लड़ने को तैयार था। पक्ष क्या प्रतिपक्ष क्या, सब एक थे। पाकिस्तान की घिग्घी बंध गई। पर यह अटल बिहारी वाजपेयी ही थे कि सब कुछ हो जाने के बावजूद उन्हों ने युद्ध नहीं होने दिया। इस लिए कि वह युद्ध के विनाशकारी परिणामों से अवगत थे। उन की एक कविता याद आती है ; जंग न होने देंगे। वह लिखते हैं :

भारत-पाकिस्तान पड़ोसी, साथ-साथ रहना है,
प्यार करें या वार करें, दोनों को ही सहना है,
तीन बार लड़ चुके लड़ाई, कितना मंहगा सौदा,
रुसी बम हो या अमेरिकी, खून एक बहना है।
जो हम पर गुज़री बच्चों के संग न होने देंगे।
जंग न होने देंगे।

हिरोशिमा पर भी वह हिरोशिमा की पीड़ा कविता लिख चुके थे : 'किसी रात को/ मेरी नींद अचानक उचट जाती है/ आंख खुल जाती है,/ मैं सोचने लगता हूं कि/ जिन वैज्ञानिकों ने अणु अस्त्रों का/ आविष्कार किया था :/ वे हिरोशिमा-नागासाकी के/ भीषण नरसंहार के समाचार सुनकर,/ रात को कैसे सोए होंगे ?' यह कविता लिखने के बावजूद अटल ने परमाणु परीक्षण तो करवा दिया पर युद्ध नहीं होने दिया। और अंतत : उन्हों ने शांति के कबूतर उड़ा दिए। सेनाएं बैरकों में लौट गईं। लेकिन कूट्नीतिक रुप से यह तो कर ही दिया कि तकरीबन दो तिहाई दुनिया ने पाकिस्तान को घोषित या अघोषित रुप से आतंकवादी देश मान लिया। पाकिस्तान दुनिया में अकेला हो गया और आज अगर भारत में आतंकवाद की घटनाओं में ज़बरदस्त कमी आई है तो यह अटल बिहारी वाजपेयी की डिप्लोमेसी का नतीज़ा है, कुछ और नहीं।

सोचिए भला कि अगर खुदा न खास्ता तब पाकिस्तान से युद्ध छेड़ दिया होता वाजपेयी ने तो दुनिया की क्या सूरत होती ? क्या तीसरा विश्वयुद्ध नहीं हो गया होता ? और फिर पाकिस्तान एक पागल देश है, कहीं परमाणु बम का इस्तेमाल कर ही देता तो मनुष्यता का क्या हुआ होता ? मेरा तो मानना है कि दुनिया को युद्ध से बचाने के लिए तब अटल जी को शांति का नोबल प्राइज़ दिया जाना चाहिए था। क्यों कि तब पाकिस्तान ने सारी स्थितियां युद्ध के लिए निर्मित कर दी थीं। संसद पर हमला देश की अस्मिता पर हमला था। पर यह वाजपेयी ही थे कि तमाम सारे चौतरफ़ा दबाव के बावजूद उन्हों ने युद्ध नहीं होने दिया। सीमाओं पर सेना तैनात कर कहते रहे कि अब आर या पार होगा पर युद्ध को फिर भी रोक लिया।

यह काम कवि हृदय अटल बिहारी वाजपेयी ही कर सकते थे, कोई और नहीं। हालां कि वह कहते रहे हैं कि मेरी कविता जंग का ऐलान है, पराजय की प्रस्तावना नहीं। वह हारे हुए सिपाही का नैराश्य-निनाद नहीं, जूझते योद्धा का जय-संकल्प है। वह निराशा का स्वर नहीं, आत्मविश्वास का जयघोष है। लेकिन इस सब के बावजूद इस एक युद्ध को रोकने के लिए वाजपेयी को जितना सैल्यूट किया जाए कम है। अटल के और भी कई ऐसे काम हैं जो काबिले ज़िक्र हैं। और सलाम करने लायक हैं।

सौ साल से भी ज़्यादा पुराने कावेरी जल विवाद को वाजपेयी ने ही सुलझाया। नदियों को जोड़ने की योजना बनाई। राष्ट्रीय राजमार्गों पर आप को जहां कहीं भी अच्छी और चमकदार सड़क मिले तो आप ज़रुर अटल बिहारी वाजपेयी को शुक्रिया कहिए। काम अभी भी जारी है। यह योजना भी अटल जी की ही बनाई हुई है। हवाई अड्डों का विकास, केंद्रीय विद्युत नियामक आयोग आदि का गठन भी उन्हों ने ही किया। यह और ऐसे विकास की तमाम योजनाएं उन के खाते में दर्ज हैं। जो सब से बड़ी बात राजनीतिक रुप से उन के खाते में दर्ज है वह यह कि भारतीय राजनीति में गैर कांग्रेसी प्रधानमंत्री के रुप में उन्हों ने सब से लंबी पारी खेली। पहले तेरह दिन ,फिर तेरह महीने के आंकड़े के बावजूद बाद में गठबंधन सरकार को न केवल स्थायित्व दिया बल्कि उन समाजवादियों के साथ सफलपूर्वक सरकार चलाई, जिन समाजवादियों को कहा जाता है कि उन को साथ ले कर चलना मेढक तौलना है।

वह विपक्ष की राजनीति में मील का पत्थर तो बने ही, आर.एस.एस. स्कूल से निकले अकेले ऐसे नेता हैं जिन्हों ने भाजपा को सांप्रदायिक पार्टी होने के शाप से मुक्त किया। जार्ज फर्नांडीज़, शरद यादव, ममता बनर्जी, नीतीश कुमार जैसे सेक्यूलर नेताओं ने आगे बढ कर हाथ मिलाया तो यह अवसरवादिता तो थी पर यह अटल बिहारी वाजपेयी की रणनीति का भी कमाल था। यह लोग अपने मुस्लिम वोट बैंक को भी खतरे में डालने की हिम्मत दिखा पाए तो अटल जी की साफ-सुथरी छवि के ही कारण। इस लिए भी कि वह जितने सीधे हैं, उतने ही सच्चे भी। अटल जी के इस जादू का ही नतीज़ा था कि लालकृष्ण आडवाणी को भी सेक्यूलर बनने का नशा सवार हो गया। और वह पाकिस्तान जा कर ज़िन्ना की कब्र पर फूल चढ़ा कर ज़िन्ना को सेक्यूलर होने का सर्टिफ़िकेट दे बैठे। और बरबाद हो गए। आज तक आडवाणी इस विवाद और अवसाद से मुक्त नहीं हो सके हैं। अटल जी की ही एक कविता है : एक पांव धरती पर रखकर ही/ वामन भगवान ने आकाश, पाताल को जीता था।/ धरती ही धारण करती है/ कोई इस पर भार न बने/ मिथ्या अभिमान से न तने।' उन की ही एक और कविता यहां मौजू है :

छोटे मन से कोई बडा नहीं होता।
टूटे मन से कोई खड़ा नहीं होता।
मन हार कर मैदान नहीं जीते जाते,
न मैदान जीतने से मन ही जीते जाते हैं।

और कि, 'निर्दोष रक्त से सनी राजगद्दी,/ श्मशान की धूल से भी गिरी है,/ सत्ता की अनियंत्रित भूख/ रक्त-पिपासा से भी बुरी है।' पहले आडवाणी और अब मोदी जाने क्यों अटल जी की यह और ऐसी कविताएं पढ़ कर अपने बारे में जाने क्यों नहीं कुछ सोचते ? तय मानिए कि अगर यह पढ़ते-सोचते तो आडवाणी बाबरी मस्ज़िद के गिरने का और कि मोदी गुजरात दंगे का बोझ ले कर प्रधानमंत्री पद की यात्रा का रुख शायद नहीं करते। पर क्या कीजिएगा विवश अटल जी ने ही यह भी लिखा है कि, ' बंट

गए शहीद, गीत कट गए,/ कलेजे में कटार गड़ गई।/ दूध में दरार पड़ गई।' वाजपेयी को आखिर क्यों लिखना पडा, ' बेनकाब चेहरे हैं,/दाग बड़े गहरे हैं,/ टूटता तिलस्म, आज सच से भय खाता हूं।/ लगी कुछ ऐसी नज़र,/ बिखरा शीशे-सा शहर,/ अपनों के मेले में मीत नहीं पाता हूं।' आखिर वाजपेयी कितनी यातना से गुज़र कर यह लिखने को मज़बूर हुए होंगे, सोचा जा सकता है।

एक बार लखनऊ में वह राजभवन में मिले। कल्याण सिंह ने मुख्यमंत्री पद की शपथ ली थी। उन के साथ कई माफ़ियाओं और बाहुबली हिस्ट्रीशीटरों ने भी बतौर मंत्री शपथ ले कर अटल जी के पांव छू कर आशीर्वाद भी लिया था। बाद में उन से मैं ने पूछा कि यह सब क्या है पंडित जी ? वह बिना कोई समय लिए आदत के मुताबिक गरदन हिला कर, हाथ भांज कर फ़ौरन बोले, 'आखिर जनता ने चुन कर भेजा है !' कह कर उन का चेहरा थोडा बुझ गया। उन की विवशता मैं समझ गया। थोड़ी देर बाद तत्कालीन राजनीति पर बात चली तो मैं ने धीरे से पूछा यह सब कैसे और किस तरह आप झेल लेते हैं ? वह आंख मूंद कर, पाज़ ले कर धीरे से ही बोले, 'यह कविता है न ! यह मुझे संभाल लेती है।' कह कर वह उठ कर खड़े हो गए। उन की ही एक कविता याद आ गई : 'इस जीवन से मृत्यु भली है,/ आतंकित जब गली-गली है/ मैं भी रोता आसपास जब/ कोई कहीं नहीं होता है।' उन का ही एक और मशहूर गीत है :

टूटे हुए सपने की कौन सुने सिसकी ?
अंतर को चीर व्यथा पलकों पर ठिठकी।
हार नहीं मानूंगा,
रार नहीं ठानूंगा,
काल के कपाल पर लिखता-मिटाता हूं।
गीत नया गाता हूं।

यह उन के नित नए गीत गाने की ही पराकाष्ठा है कि उन के तमाम विरोधी भी उन के चरण-स्पर्श कर उन से आशीर्वाद ले कर प्रसन्न होते हैं। और वह बहुत भाउक हो कर आशीर्वाद भी देते हैं। गले लगा लेते हैं। मुलायम सिंह यादव तक को मैं ने उन के चरण-स्पर्श करते हुए देखा है। एक बार एक इंटरव्यू के दौरान बातचीत में मैं ने उन से कहा कि पंडित जी, मुलायम सिंह जी आप का इतना आदर करते हैं, आप भी उन्हें इतना स्नेह देते हैं तो जो राजनीति मुलायम सिंह कर रहे हैं, मुस्लिम तुष्टिकरण की जाति-पाति की कभी आप रोकते क्यों नहीं ? समझाते क्यों नहीं। वह ज़रा देर चुप रहे, फिर बोले, 'सब की अपनी-अपनी राजनीति है। कोई समझने समझाने की इस में बात नहीं है।' मैं ने उन्हें लगभग टोकते हुए कहा कि फिर भी ! तो वह बोले यह लिखिएगा नहीं। और बोले, 'वास्तव में मुलायम सिंह जैसे लोग भी बहुत ज़रुरी हैं।' उन्हों ने एक छोटा पाज़ लिया और बोले, 'हमारे मुस्लिम भाइयों के साथ एक बड़ी दिक्कत यह है कि उन के पास कोई अपना नेतृत्व नहीं है, उन के बीच से कोई कद्दावर नेता नहीं है तो वह अपना दुख ले कर कहां जाएं ? किस के कंधे पर सर रख कर रोएं ? तो हमारे मित्र मुलायम सिंह जी उन की यह ज़रुरत पूरी कर देते हैं। उन का दुख संभाल लेते हैं।' वह मुस्कुराए, 'हां ज़रा वह राजनीति की अति भी कर देते हैं। पर ज़रुरी हैं मुलायम सिंह जी, उन के लिए। वह उन के लिए प्रेशर कुकर में सीटी का काम करते हैं। सीटी न हो तो फट जाएगा प्रेशर कुकर !' जैसे उन्हों ने जोड़ा, 'मेरे लिए यह काम कविता करती है। साहित्य मुझे जोड़ता है। टूटने नहीं देता। आप याद कीजिए कि कई बार वह राजनीति की कठिन घड़ियों में भी कैसे तो कई सवालों का जवाब अपनी कविताओं से देते रहे हैं।

सवालों के जवाब में उन्हें लगभग काव्य-पाठ कर देते मैं ने कई बार पाया है। वह चाहे प्रेस कानफ्रेंस हो या कोई कार्यकर्ता सम्मेलन या कोई जनसभा।

बहुत लोग यह तो मानते हैं कि अटल बिहारी वाजपेयी बहुत घटिया कवि हैं, या कि वह भी कोई कवि हैं ?और भी कई बातें लोग कहते मिलते ही हैं। ठीक वैसे ही जैसे बहुत लोग उन्हें एक सांप्रदायिक पार्टी का नेता मानते हैं। पर यह बात बहुत कम लोग जानते हैं कि अटल जी न सिर्फ़ कविता के बल्कि साहित्य की अन्य विधाओं में भी गहरी दिलचस्पी रखते रहे हैं। नाटक और उपन्यास आदि में भी वह वैसी ही दिलचस्पी रखते रहे हैं। प्रेमचंद, के अलावा,अज्ञेय की शेखर एक जीवनी, धर्मवीर भारती का अंधा युग, वृंदावनलाल वर्मा के ऐतिहासिक उपन्यास आदि के साथ-साथ वह तसलीमा नसरीन तक को पढ़ते रहे हैं।

उर्दू शायरी में भी उन की गहरी दिलचस्पी रही है। गालिब और मीर जैसे शायरों के शेर उन के भाषणों में बार-बार आते रहे हैं। अब तो गज़ल गायक मेंहदी हसन नहीं रहे पर आप को याद होगा ही कि ज्ब मेंहदी हसन कुछ समय पहले बीमार पड़े और पाकिस्तान में उन का ठीक से इलाज नहीं हो पा रहा था तब अटल बिहारी वाजपेयी ने उन को भारत आदर पूर्वक बुला कर इलाज करवाया था।अटल जी मानते रहे हैं कि जो राजनीति में रुचि लेता है, वह साहित्य के लिए समय नहीं निकाल पाता और साहित्यकार राजनीति के लिए समय नहीं दे पाता। किंतु कुछ लोग ऐसे हैं जो दोनों के लिए समय देते हैं। एक समय वह कहते थे कि जब कोई साहित्यकार राजनीति करेगा तो वह अधिक परिष्कृत होगी।

यदि राजनेता की पृष्ठभूमि साहित्यिक है तो वह मानवीय संवेदनाओं को नकार नहीं सकता। कहीं कोई कवि यदि डिक्टेटर बन जाए तो वह निर्दोषों को खून से अपने हाथ नहीं रंगेगा। तानाशाहों में क्रूरता इसी लिए आती है कि वे संवेदनहीन हो जाते हैं। एक साहित्यकार का हृदय दया, क्षमा. करुणा आदि से आपूरित रहता है। इसी लिए वह खून की होली नहीं खेल सकता। वह बहुत स्पष्ट मानते रहे हैं कि आज राजनीति के लोग साहित्य, संगीत, कला आदि से दूर रहते हैं। इसी से उन में मानवीय संवेदना का स्रोत सूख-सा गया है। अपनी विचारधारा को आगे बढ़ाने के लिए कम्यूनिस्ट अधिनायकवादियों ने ललित कलाओं का गलत उपयोग किया। वह राजनीति और साहित्य को संतुलित रखने के हामीदार रहे हैं।

शायद इसी लिए उन का मुझ पर स्नेह कुछ ज़्यादा ही रहा अन्य की अपेक्षा कि मैं लिखने-पढ़ने वाला आदमी हूं। एक बार १९९८ में मेरा बहुत बड़ा एक्सीडेंट हो गया था। लगभग पुनर्जन्म ले कर मैं लौटा। तब वह अस्पताल में मुझे देखने आए थे। और बड़ी देर तक मेरा कुशल क्षेम लेते रहे। मेरे पिता जी और पत्नी को दिलासा दिया। मैं अर्ध-बेहोशी में था पर उन्हें हमेशा की तरह पंडित जी ही कह कर संबोधित करता रहा। डाक्टरों, प्रशासन आदि को वह ज़रुरी निर्देश भी देते गए। वह मेरी चिकित्सा का हालचाल बाद में भी लेते रहे थे। सहयोगियों को भेज कर, फ़ोन कर के। तो उन के जैसे व्यस्त व्यक्ति के लिए अगर मेरे जैसे साधारण आदमी के लिए भी मन और समय था तो सिर्फ़ इस लिए कि वह सिर्फ़ राजनीतिज्ञ ही नहीं एक संवेदनशील व्यक्ति भी हैं। एक समर्थ कवि भी हैं।

अटल जी को मैं ने पहली बार १९७७ में गोरखपुर की एक चुनावी सभा में सुना था तभी से उन के भाषण का मैं मुरीद हो गया। तब विद्यार्थी था। लेकिन सब के भाषण तब भी अच्छे नहीं लगते थे, अब भी नहीं

लगते। इंदिरा गांधी, चरण सिंह, जगजीवन राम, चंद्रशेखर, शरद यादव, सुषमा स्वाराज आदि कुछ लोग हैं जिन के भाषण मुझे अच्छे लगते रहे हैं। पर इन सब में अटल जी शीर्ष पर हैं। नहीं बहुत छोटा था तब शास्त्री जी का भी भाषण सुना था। लेकिन बहुत गूंज उस की मन में नहीं है। बस याद भर है। कि तब उन के साथ इंदिरा गांधी भी थीं। खैर फिर अटल जी को लखनऊ सहित तमाम जन सभाओं, प्रेस कानफ्रेंसों में बार-बार सुनते हुए जीवन का अधिकांश हिस्सा गुज़रा है। उन के साथ यात्रा करते, उन को कवर करते, इंटरव्यू करते बहुत सारी यादें हैं। पर एक याद तो जैसे हमेशा मन में टंगी रहती है। उन की लखनऊ के हज़रतगंज चौराहे पर की गई जनसभाएं।

बीच चौराहे पर उन का मंच बनता था। और वह पांचों तरफ़ जाने वाली सड़कों के तरफ़ बारी-बारी रुख कर जब हाथ घुमाते हुए, गरदन को लोच देते हुए ललकारते हुए बोलते थे तो क्या तो समां बंध जाता था। वह बोलते हुए जिधर भी मुंह करते लगता जैसे दिशा बदल गई हो, सूरज उधर ही उग गया हो। पांचों सड़कें दूर-दूर तक खचाखच भरी हुई और किसी नायक की तरह बोलते हुए अटल बिहारी वाजपेयी॥ तब के दिनों वह बाद के दिनों की तरह लंबे-लंबे पाज़ नहीं लेते थे। धारा-प्रवाह बोलते थे। कभी जाकेट की ज़ेब में हाथ डाल कर खड़े होते तो कभी दोनों हाथ लहराते हुए। अदभुत समां होता वह। तब के दिनों लोग बाग उन्हें भाजपा का धर्मेंद्र कहा करते थे। मतलब हर फ़न में माहिर। लोकसभा में उन के भाषणों की भी याद वैसे ही टंगी हुई है मन में। चाहे वह पहले प्रधानमंत्रित्व के १३ दिन बाद ही संख्या-बल के आगे सर झुका कर इस्तीफ़ा देने की घोषणा हो या दूसरी बार मायावती और जयललिता के ऐन वक्त पर दांव देने और उड़ीसा के तत्कालीन मुख्यमंत्री गिरधर गोमांग द्वारा बतौर सांसद वोटिंग करने के नाते एक वोट से उन की सरकार के गिर जाने पर दिया जाने वाला वक्तव्य हो। या ऐसे ही ढेर सारे दृष्य मन में वैसे ही बसे हैं जैसे अभी कल ही की बात हो।

यह ज़रुर है कि उन्हों ने राजनीति में कइयों को जीवन दिया, मायावती, जयललिता और ममता जैसी मनमर्जी मिजाज वाली महिलाओं को संभाला बल्कि मायावती की तो उन्हों ने जान भी बचाई और लाख विरोध के बावजूद , पार्टी में धुर विरोध के बावजूद बार-बार भाजपा की मदद से मुख्यमंत्री भी बनवाया। तो भी मायावती ने उन के हर एहसान पर पानी डाला और बार-बार। पर अटल जी ने कभी इस बात का इज़हार भी भूले से किया हो, मुझे याद नहीं आता। एक बार मैं ने बहुत कुरेदा तो वह मुसकराते हुए ही बोले राजनीति है, कोई पूजा-पाठ नहीं।

एक बार मैं ने उन के अविवाहित रह जाने पर चर्चा करते हुए पूछा कि आप को क्या लगता है कि यह ठीक किया ? सुन कर वह गंभीर हो गए। वह बोले, 'क्या ठीक, क्या गलत ? अब तो समय बीत गया।' पर बाद में उन्हों ने स्वीकार किया कि अगर वह विवाहित रहे होते तो शायद जीवन में और ज़्यादा ऊर्जा से काम किए होते। ठीक यही बात मैं ने नाना जी देशमुख से भी एक बार पूछी थी तो लगभग यही जवाब उन का भी था। लता मंगेशकर से भी जब यही बात पूछी थी उन के मन में इस तरह की कोई बात नहीं थी। पर अटल जी के मन में थी। एक समय वह हरदोई के संडीला में भी अपनी जवानी में रहे थे। संडीला में लड्डू बड़े मशहूर हैं। तो वाजपेयी जी परिहास पर आ गए। बोले, 'यह तो वो लड्डू हैं जो खाए, वह भी पछताए, जो न खाए वो भी पछताए।' उन का एक गीत है सपना टूट गया :

हाथों की हल्दी है पीली

पैरों की मेंहदी कुछ गीली
पलक झपकने से पहले ही सपना टूट गया।

हालां कि यह गीत उन्हों ने जनता पार्टी के टूटने के समय लिखा था। पर उन के विवाहित जीवन के सपने से भी जोड़ कर इस कविता को देखा गया है। तो भी उन का जीवन प्रेम से या स्त्रियों से शेष रहा हो, ऐसा भी नहीं रहा है। उन के कई सारे प्रसंग-संबंध बार-बार हवा में उड़ते रहे हैं। चर्चा पाते रहे हैं। ग्वालियर, लखनऊ से लगायत दिल्ली तक में। ज़मीन से ले कर आकाश तक में। पर यह चर्चा कभी सतह पर नहीं आई। कभी नारायणदत्त तिवारी या किसी अन्य स्तर की चर्चा कभी नहीं हुई। एक गरिमा और खुसफुस-खुसफुस के स्तर पर ही रही। उन की एक कविता है, आओ मर्दों नामर्द बनो ! जो उन्हों ने इमरजेंसी में हुई नसबंदी की अंधेरगर्दी पर उन्हों ने लिखी थी, उस पर गौर करें:

पौरुष पर फिरता पानी है
पौरुष कोरी नादानी है
पौरुष के गुण गाना छोड़ो
पौरुष बस एक कहानी है
पौरुष विहीन के पौ बारा
पौरुष की मरती नानी है
फ़ाइल छोड़ो, अब फ़र्द बनो।

मनाली उन की प्रिय जगह है। मनाली पर भी उन्हों ने गीत लिखे हैं। गौर करे इस में उन की मस्ती :

मनाली मत जइयो, गोरी
राजा के राज में।
जइयो तो जइयों.
उड़ि के मत जइयों,
अधर में लट्किहो,
वायुदूत के जहाज में।

लेकिन वह यह भी लिखते थे :

मन में लगी जो गांठ मुश्किल से खुलती,
दागदार ज़िंदगी न घाटों पर धुलती।
जैसी की तैसी नहीं,
जैसी है वैसी सही,
कबिरा की चादरिया बड़े भाग मिलती।

उन का भांग प्रेम भी खूब चर्चा में रहा है। माना जाता रहा है कि वह बोलने में जो अचानक लंबा पाज़ खींच लेते हैं, वह उन की भंग की तरंग का ही नतीज़ा है, कमाल है, कुछ और नहीं। प्रेस कानफ्रेंसों में तो कई बार अजीब स्थिति हो जाती रही है। वह एक सवाल का जवाब थोड़ा सा दे कर आंख बंद कर पाज़

में चले जाते तो कुछ अधीर पत्रकार तब तक दूसरा, तीसरा सवाल ठोंक देते। तो उन्हें किसी तरह रोका जाता। उन की इस तरंग का मज़ा कई और मौकों पर भी बार-बार लिया जाता रहा है। एक बार पंद्रह अगस्त को वह लालकिले पर भाषण देने के लिए कार से नीचे उतरे। एक पैर में जूता पहने हुए। दूसरे पैर का जूता कार में ही रह गया। पर वह इस से बेखबर घास पर छप-छप करते हुए चल पड़े। एक पैर में जूता, एक पैर में मोज़ा। बिलकुल किसी शिशु सी मासूमियत लिए अटल जी चले जा रहे हैं। अदभुत दृश्य था। सी.एन.एन जैसे चैनलों ने इस शाट को बहुत दिनों तक बार दिखाया। और लोग मज़ा लेते रहे।

ऐसा भारत जो भूख, भय, निरक्षरता और अभाव से मुक्त हो की कामना करने वाले अटल बिहारी वाजपेयी एक समय मानते रहे हैं कि क्रांतिकारियों के साथ हमने न्याय नहीं किया, देशवासी महान क्रांतिकारियों को भूल रहे हैं, आज़ादी के बाद अहिंसा के अतिरेक के कारण यह सब हुआ।' अब लगता है कि इस छुद्र राजनीति की आपाधापी में देश के लोग तो क्या खुद भाजपाई भी अब अटल बिहारी वाजपेयी को भूलने लग गए हैं। तो यह खटकता है। ऐसे शानदार राजनेता को हम उस के जीते जी ही भूलने लगें तो उन्हीं की एक बहुत लोकप्रिय शब्दावली में जो गरदन पर लोच डालते हुए, हाथ हिलाते हुए कहें कि, 'यह अच्छी बात नहीं है !' तो गलत बात नहीं होगी। अब की २५ दिसंबर को वह ८८ वर्ष पूरे कर ८९वें वर्ष में प्रवेश करेंगे। तो मन करता है कि उन्हें समूचे देशवासियों की तरफ से उन की कविता ही में अग्रिम बधाई दूं :

हर पचीस दिसंबर को
ज़ीने की नई सीढ़ी चढ़ता हूं,
नए मोड़ पर
औरों से कम, स्वयं से ज़्यादा लड़ता हूं।
मेरा मन मुझे अपनी ही अदालत में खड़ा कर
जब जिरह करता है
मेरा हलफ़नामा, मेरे ही खिलाफ़ पेश करता है
तो मैं मुकदमा हार जाता हूं।

आज की तारीख में ऐसा कोई राजनेता या कोई कवि जो यह और इस तरह मुकदमा हारने की कूवत या कौशल रखने वाला हो, है क्या कहीं ? ऐसे में उन की विनम्रता भरी वह पंक्तियां भी फिर से याद आ जाती हैं:

मेरे प्रभु !
मुझे इतनी ऊंचाई कभी मत देना
गैरों को गले न लगा सकूं
इतनी रुखाई
कभी मत देना।

वह तो आज की तारीख में भले ठीक से सुन या बोल नहीं पा रहे तब भी क्या सचमुच कुछ नहीं सोचते-

गाते होंगे ? ठन गई !/ मौत से ठन गई !/ रास्ता रोक कर वह खड़ी हो गई,/ यों लगा ज़िंदगी से बड़ी हो गई गुनगुना रहे होंगे कि काल के कपाल पर लिखता-मिटाता हूं।/ गीत नया गाता हूं।' गा रहे होंगे ?

या कि इस निर्मम समय में कुछ और भी गा रहे हों ? क्या पता ?

साभार- http://sarokarnama.blogspot.com/2012/11/blog-post.html से